ORIGINAL RESEARCH PAPER

Education

वैदिक संस्कृति एवं संस्कारों की वर्तमान शिक्षा में प्रासंगिकता

KEY WORDS: वैदिक, संस्कृति, संस्कारों, शिक्षा, प्रासंगिकता

राधा रानी सिंह असिस्टेन्ट प्रोफेसर, शिक्षाशास्त्र विभाग आर्य कन्या पी.जी. कालेज, प्रयागराज।

ABSTRACT

संस्कृति शब्द की व्युत्पत्ति 'संस्कार' शब्द से हुई है तो अत्युक्ति न होगी। मनुष्य के परिमार्जन का आधार है संस्कृति। परिमार्जन से आशय है मनुष्य के सर्वांगीण जीवन का विकास करना। इसके अन्तर्गत मनुष्य का खान–पान, रहन–सहन, आचार–विचार, वेश–भूषा, चिन्तन–मनन, कला–कौशल, बोली–भाषा तथा जाति–समाज आदि का समावेश होता है। वैदिक शिक्षा मुख्यतः नैतिक, धार्मिक, भौतिक, सामाजिक, वैज्ञानिक, मनोवैज्ञानिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों की स्थापना के लिए प्रवर्तित हुई। वैदिक युग में 'ज्ञान', 'विद्या' अथवा 'मेधा' का विशिष्ट महत्त्व था। वैदिक दृष्टि में **'असतो मा सद्गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय'** की ज्योति ही वास्तविक ज्ञान है। वैदिक युग में ज्ञान को व्यक्ति का तीसरा नेत्र माना गया है **'ज्ञानं मनुजस्य तृतीय नेत्रं'। सांस्कृतिक प्रगति** में वैदिक शिक्षा की सक्रिय भूमिका एवं औचित्यपूर्ण योगदान अध्येय है। आचारों और विचारों का समन्वय ही संस्कृति है। मनुष्य में सौन्दर्योपासना की प्रवृत्ति अनादि है। सौन्दर्य प्रेम की आस्था ने ही संस्कृति एवं सभ्यता को जन्म दिया। संस्कृति का जो सत्य, शिव, सुन्दर पक्ष है, वह वैदिक शिक्षा से ही प्रादुर्भूत हुआ है। वैदिक शिक्षा ब्रह्मचारी को तर्क, धर्म, विज्ञान, कला, साहित्य एवं दर्शन के मान्य मूल्यों की जानकारी देती है। आदर्श मूल्यों की स्थापना वैदिक शिक्षा की श्रेष्ठ परम्परा रही है। इस परम्परा ने उस मानवतावादी वैश्विक संस्कृति को जन्म दिया, जिसमें **''वसुधैव कुटुम्बकम्''** एवं **''सर्वे भवन्तु सुखिनः''** की महान् भावना पल्लवित एवं पुष्पित हो सकी।

संस्कृति शब्द की व्युत्पत्ति 'संस्कार' शब्द से हुई है तो अत्युक्ति न होगी। मनुष्य के परिमार्जन का आधार है संस्कृति। परिमार्जन से आशय है मनुष्य के सर्वांगीण जीवन का विकास करना। इसके अन्तर्गत मनुष्य का खान–पान, रहन–सहन, आचार–विचार, वेश–भूषा, चिन्तन–मनन, कला–कौशल, बोली–भाषा तथा जाति–समाज आदि का समावेश होता है। ''संस्कृति के सम्बन्ध में मैथ्यू आर्नल्ड ने एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण वाक्य कहा है। संसार में जो कुछ सबसे श्रेष्ठ सोचा गया है और कहा गया है उसे संस्कृति कहते हैं।'' वस्तुतः संस्कृति का सम्बन्ध मानव जीवन के आन्तरिक क्रिया–कलापों से है। मानव संस्कृति एक ओर अविभाज्य है किन्तु विशेष भौगोलिक परिस्थितियों और ऐतिहासिक परम्पराओं के अन्तर्गत इसके स्वरूप भिन्न–भिन्न होते हैं। अर्थात् कहा जाये तो संस्कृति एक अविरोधी वस्तु है और इसके विभिन्न उपकरण मानव समूहों को एक–दूसरे के निकट लाने की क्षमता रखते हैं।

संस्कृति रूढ़िगत समझ, प्रत्यक्ष कला और शिल्पकृति की एक संगठित संरचना है, जो परम्परा के माध्यम से बनी रहती है तथा किसी समाज की विशेषता होती है। संस्कृति के अन्तर्गत सम्पूर्ण जीवन विधियों का समावेश होता है। अतः स्पष्ट है कि संस्कृति अनेक विधियों का एक संतुलित संगठन होता है और यही एक–एक विधि संस्कृति की एक–एक इकाई का तत्त्व है।

भारतीय इतिहास और संस्कृति का आधार अत्यधिक प्राचीन है। देश की सामाजिक संस्थाएं इसी प्राचीनता के योग में पल्लवित और पुष्पित हुई हैं। इनके विकासक्रम का इतिहास सहस्रों वर्षों का है जिनमें अनेक सामाजिक तत्वों का योग है। वैदिक युग से ही भारत की सभ्यता और संस्कृति उन्नतिशील रही है। अनेकानेक भारतीय सामाजिक संस्थाओं का विकास वैदिक युग में ही हो गया था। वर्ण संस्था, आश्रम संस्था, विवाह संस्था आदि ऐसी अनेक संस्थाओं का उद्भव ही नहीं बल्कि उत्थान भी वैदिक युग के परवर्ती काल से प्रारम्भ हो गया था।

वैदिक शिक्षा मुख्यतः नैतिक, धार्मिक, भौतिक, सामाजिक, वैज्ञानिक, मनोवैज्ञानिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों की स्थापना के लिए प्रवर्तित हुई। इनमें नैतिक, भौतिक, सामाजिक, वैज्ञानिक एवं मनोवैज्ञानिक मूल्य लौकिक मूल्य के अन्तर्गत तथा धार्मिक एवं आध्यात्मिक मूल्य अलौकिक मूल्य के अन्तर्गत परिगणित होते हैं।

वैदिक युग में 'ज्ञान', 'विद्या' अथवा 'मेधा' का विशिष्ट महत्त्व था। वैदिक दृष्टि में **'असतो मा सद्गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय'** की ज्योति ही वास्तविक ज्ञान है। श्रवण, मनन एवं निदिध्यासन की प्रणाली पर आधारित ज्ञान एवं विद्या का सम्बन्ध 'जानने' से है। धारणाशक्ति से सम्पन्न बुद्धि को 'मेधा' कहा गया है। आर्यजन् ज्ञान को आत्मानुभूति एवं आत्मज्ञान का साधन मानते हुए घोषणा करते हैं कि **''ज्ञान के बिना 'मैं क्या हूँ'** यह भी नहीं जाना जा सकता है। ज्ञान के अभाव में मैं मूर्ख और अर्द्धविक्षिप्त के समान हूँ। वैदिक मंत्र व्यक्ति को मर्यादित जीवन व्यतीत करने की प्रेरणा देते हैं, जिससे वह एक सभ्य एवं श्रेष्ठ संस्कृति का सृजन कर सके। अथर्ववेद में चोरी, गुरु–पत्नी–गमन, ब्रह्म हत्या, भ्रूण–हत्या, मद्यपान, मिथ्या–भाषण एवं पाप कर्मों के निषेध रूप में सात मर्यादाएँ निर्धारित की गयी हैं।

वैदिक युग में ज्ञान को व्यक्ति का तीसरा नेत्र माना गया है **'ज्ञानं मनुजस्य तृतीय नेत्रं'।** आज के परिप्रेक्ष्य में भी यही ज्ञान रूपी तीसरा नेत्र ही हमें दृश्य और सूक्ष्म दोनों जगत का ज्ञान कराता है। यह हमें सत्य, असत्य का भेद बतलाता है। करणीय तथा अकरणीय कर्मों का भेद स्पष्ट करता है और भौतिक एवं आध्यात्मिक उपलब्धियों को प्राप्त करने का मार्ग आलोकित करता है।

वैदिक काल में शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य ज्ञान का विकास था। छात्रों के योग्यता का मापदण्ड अंक–पत्र, प्रमाण–पत्र या उनकी उपाधियों से नहीं होता था। छात्रों द्वारा अर्जित ज्ञान जिसका प्रमाण विद्वतजनों से शास्त्रार्थ कराकर दिया जाता था। इस प्रकार वैदिक शिक्षा का उद्देश्य केवल पढ़ना नहीं था वरन् मनन, स्मरण और स्वाध्याय द्वारा ज्ञान को आत्म सात करना भी था। वैदिक कालीन गुरुओं की मान्यता थी कि मानव जीवन का अन्तिम उद्देश्य मोक्ष प्राप्त करना है और इस मोक्ष प्राप्ति के लिए स्वस्थ्य शरीर और निर्मल मन का होना आवश्यक है। गुरुकुलों में शिष्यों के मानसिक एवं शारीरिक स्वास्थ्य के संरक्षण तथा सम्वर्द्धन पर विशेष बल दिया जाता था। उन्हें उचित आहार–विहार और आचार–विचार की शिक्षा दी जाती थी। छात्रों को ब्रह्म मुहूर्त में उठना पड़ता था, नित्य क्रिया से निवृत्ति के पश्चात् व्यायाम करना पड़ता था। सादा भोजन करना पड़ता था, नियमित दिनचर्या का पालन करना होता था और व्यसनों से दूर रहना होता था।

वर्तमान शिक्षा में भी शिक्षा के उपरोक्त उद्देश्य को स्वीकार करते हुए छात्र के उत्तम स्वास्थ्य पर बल दिया गया है। विद्वानों का कथन है कि ''**स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मष्तिष्क का वास होता है।**''

वैदिक काल में शिष्यों को समाज व राष्ट्र के प्रति कर्त्तव्यों का ज्ञान कराया जाता था और उनके पालन में प्रशिक्षित किया जाता था। गुरुकुल की शिक्षा समाप्त होने पर समापवर्तन समारोह आयोजित होता था। इस समारोह में गुरु–शिष्यों का उपदेश देते थे। माता–पिता की सेवा करना समाज की सेवा करना, अतिथियों का सत्कार करना, दीन–दुखियों की सहायता करना तथा गृहस्थ धर्म का पालन करना आदि उपदेश दिये जाते थे।

वैदिक कालीन शिक्षा का एक प्रमुख उद्देश्य अपनी संस्कृति का संरक्षण एवं हस्तान्तरण था। उस काल में गुरुकुलों की सम्पूर्ण कार्य पद्धति धर्म प्रदान थी, संस्कार प्रधान थी। शिष्य को आश्रमानुसार कार्य करने का उपदेश दिया जाता था।

वैदिक काल में व्यक्ति के चरित्र को उसके पाण्डित्य से भी महत्वपूर्ण माना जाता था। छात्रों के भौतिक एवं चारित्रिक विकास के लिए उन्हें धर्म समस्त आचरण में प्रशिक्षित किया जाता था तथा प्रारम्भ से ही नीति शास्त्र की शिक्षा प्रदान की जाती थी। गुरुकुलों के उत्तम वातावरण, सदाचार के उपदेशों, महापुरूषों के उदाहरणों, महान विभूतियों के आदर्शों आदि के द्वारा छात्रों के चरित्र का निर्माण किया जाता था।

वैदिक काल में शिष्यों को उनके योग्यतानुसार कृषि, पशुपालन एवं अन्य कला कौशल की शिक्षा दी जाती थी। उस समय हमारा देश धन–धान्य से सम्पन्न था। वर्ण व्यवस्थानुसार प्रत्येक वर्ण के लिए कर्म निर्धारित थे। ब्राह्मणों को अध्ययन–अध्यापन की, क्षत्रियों को शासन, कार्य युद्ध, कला कौशल की तथा वैश्यों को कृषि, व्यापार तथा पशुपालन की शिक्षा प्रदान की जाती थी। शूद्रों को शिक्षा से वंचित कर दिया गया था।

वैदिक काल में शिक्षा का अन्तिम और सर्वश्रेष्ठ उद्देश्य आध्यात्मिक विकास था। वैदिक दर्शन के अनुसार ईश्वर ने मनुष्य को यह शरीर विशेष प्रयोजन से दी है– आत्म तत्व के ज्ञान के लिए, ईश्वर को प्राप्त करने के लिए, मोझ की प्राप्ति के लिए।

इसीलिए शिक्षा का प्रथम उद्देश्य इस देह का समुचित विकास होना चाहिए तथा दूसरे पायदान पर उसका सामाजिक, सांस्कृतिक, नैतिक एवं चारित्रिक विकास होना चाहिए, इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए वैदिक काल में मनुष्य को भाषा, साहित्य, धर्म और नीतिशास्त्र का ज्ञान कराया जाता था। उनमें धार्मिक और ईश्वर भक्ति की भावना का विकास किया जाता था।

अपरा पाठ्यचर्या–(भौतिक) इसके अन्तर्गत भाषा व्याकरण अंकशास्त्र, कृषि, पशुपालन, कला (संगीत एवं नृत्य) कौशल (कताई, बुनाई, रंगाई, काष्ठ कार्य, धातु कार्य एवं शिल्प) अर्थ शास्त्र राजनीति शास्त्र, भूगर्भ शास्त्र, प्राणिशास्त्र, तर्कशास्त्र, सर्वविद्या ज्योतिर्विज्ञान, आयुर्विज्ञान, एवं सैनिक शिक्षा का अध्ययन और व्यायाम, गुरुकुल व्यवस्था और गुरु सेवा क्रिया सम्मिलित थी। **पूरा पाठ्यचर्या** (आध्यात्मिक) इसके अन्तर्गत वैदिक साहित्य, धर्म शास्त्र, नीतिशास्त्र का अध्यन और इन्द्रिय निग्रह, धर्मानुकूलन आचरण, ईश्वर भक्ति, सन्ध्यावन्दन, यज्ञादि क्रियाओं का प्रशिक्षण सम्मिलित था।

वैदिक काल में शिक्षण की विधि–प्रवचन और व्याख्यान के रूप में प्रायः मौखिक थी और उसके मुख्य अंग थे– श्रवण, मनन, चिन्तन, स्वाध्याय, एवं पुनरावृत्ति ।

निष्कर्ष–

सांस्कृतिक प्रगति में वैदिक शिक्षा की सक्रिय भूमिका एवं औचित्यपूर्ण योगदान अध्येय है। आचारों और विचारों का समन्वय ही संस्कृति है। मनुष्य में सौन्दर्योपासना की प्रवृत्ति अनादि है। सौन्दर्य प्रेम की आस्था ने ही संस्कृति एवं सभ्यता को जन्म दिया। संस्कृति का जो सत्य, शिव, सुन्दर पक्ष है, वह वैदिक शिक्षा से ही प्रादुर्भूत हुआ है। वैदिक शिक्षा ब्रह्मचारी को तर्क, धर्म, विज्ञान, कला, साहित्य एवं दर्शन के मान्य मूल्यों की जानकारी देती है। आदर्श मूल्यों की स्थापना वैदिक शिक्षा की श्रेष्ठ परम्परा रही है। इस परम्परा ने उस मानवतावादी वैश्विक संस्कृति को जन्म दिया, जिसमें **''वसुधैव कुटुम्बकम्''** एवं **''सर्वे भवन्तु सुखिनः''** की महान् भावना पल्लवित एवं पुष्पित हो सकी।

वर्तमान शिक्षा में भी नागरिक सामाजिक एवं राष्ट्रीय कर्त्तव्यों के बोध के लिये नैतिक शिक्षा, राष्ट्र गौरव भारतीय संस्कृति आदि की शिक्षा प्रदान की जाती है।

वैदिक काल में ही संस्कृति की इतनी सुदृढ़ नींव रखी गई कि अनेक संकटो को झेलती हुई भी हमारी संस्कृति आज तक जीवित है और आज की शिक्षा में भी उसकी उपादेयता सिद्ध हो रही है।

वैदिक संस्कृति एवं संस्कारों की शिक्षा प्रणाली और वर्तमान शिक्षा प्रणाली में जो अन्तर है, उनका होना विकास के क्रम में स्वभाविक है किन्तु वैदिक शिक्षा का वर्तमान शिक्षा में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से महान योगदान है और वर्तमान परिपेक्ष्य में वैदिक शिक्षा की प्रासंगिकता अधिक है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1 अल्टेकर, ए0एस0, एजूकेशन इन एशिएन्ट इण्डिया, द इण्डियन बुक शॉप, बनारस, 1934, तृतीय संस्करण, 1948, पोजीशन ऑफ वूमेन इन हिन्दू सिवालाइजेन काशी 1938।

2 एण्ड डाउसन, हिस्ट्री आफ इण्डिया ऐज टोल्ड बाई इट्स आन हिस्ट्री–रियेन्स, भाग–8 कलकत्ता, 1932
3 केई, एफ0ई0, भारतीय शिक्षा एवं उसकी समस्याएं आगरा प्रकाशन
4 थापर, रोमिला, भारत का इतिहास, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, 1988
5 दास एस0के0, दि एजूकेशनल सिस्टम आफ ऐशियन्ट हिन्दूज दि मित्रा प्रेस, कलकत्ता, 1930।
6 उपेन्द्रनाथ, भारतीय शिक्षा की प्रमुख समस्यायें राजस्थान बुक स्टोर्स उदयपुर, 1985
7 पाठक पी0डी0, भारतीय शिक्षा एवं उसकी समस्यायें, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा, 1974।